गांधी और अंबेडकरः एक संक्षिप्त विश्लेषण

डॉ0 तरूण सिंह
उ0 मा0 शिक्षक (राजनीति विज्ञान)
+2 सुमरित उच्च विद्यालय, बनमनखी, पूर्णियाँ

सारांश :–
दक्षिण अफ्रीका से आने के बाद गांधी ने कांग्रेस की कमान ले ली थी। 1920 के असहयोग आंदोलन ने उन्हें राष्ट्रीय नेता बना दिया। अंबेडकर उस दौरान अमेरिका में थे और कोलंबिया यूनिवर्सिटी में भारतिय जाति व्यवस्था पर थीसिस से ख्याति प्राप्त कर ली थी। 1925 आते–आते वे दलितों और अछूतों की आवाज के तौर पर स्थापित हो चुके थे। गांधी और अंबेडकर दोनों महापुरूषों के स्वभाव, आस्थाओं, विचारों और कार्यप्रणाली में इतनी भिन्नता रही है कि दूर दूर तक समानता की कोई रेखा नजर नहीं आती। सामाजिक और राजनीतिक प्रश्नों और प्रसंगों पर दोनों में न केवल मत–भिन्नता है बल्कि संघर्ष भी हुआ।

शब्द कुंजी :–वर्णाश्रम व्यवस्था, अस्पृश्यता, मत भिन्नता, प्रायश्चित, सत्तान्तरण, निर्वाचक मंडल

गांधी व्यवहारिक आदर्शवादी हैं भारत जैसे देश जहां रूढ़ियां, अंधविश्वास, परंपराएं हावी थी और जो आज भी हैं इन परिस्थितियों में स्वराज की लड़ाई में सबको साथ लेकर चलना गांधी की विवशता थी। इसी कारण वह परंपरावादी मालूम पड़ते हैं। जीवन के अंतिम कुछ वर्षों को छोड़ वह वर्ण व्यवस्था का समर्थन करते रहे। वह वर्णाश्रम धर्म और अस्पृश्यता में कोई संबंध नहीं मानते हैं। वे अश्पृश्यता के लिए सामाजिक और राजनीतिक अधिकारों का संघर्ष के स्थान पर सवर्णों में पाप बोध जगाने और उनके प्रायश्चित पर बल देते हैं। नासिक के कालाराम मंदिर में अस्पृश्यों के प्रवेश के लिए सत्याग्रह के बारे में गांधी का मानना था कि यह संघर्ष अछूतों को नहीं बल्कि स्पृश्यों को करना चाहिए।

गांधी ने दलित को हरिजन कहा वे छुआछूत मिटाना चाहते थे किंतु स्वराज आंदोलन की कीमत पर नहीं। गांधी अछूतों के हिंदू समाज से अलग होने की बात से बिल्कुल समहत नहीं थे। इस कारण उनके ऊपर अंतर्विरोधी होने का आरोप लगा कि उन्होंने मुसलमान और सिखों को अल्पसंख्यक के आधार पर विशेष अधिकार देना स्वीकार कर लिया परंतु अस्पृश्यों के लिए पृथक निर्वाचन मंडल का विरोध करते रहे। 1920 में असहयोग आंदोलन के साथ गांधी ने स्वतंत्रता आंदोलन का नेतृत्व संभाला। इसी बीच उन्होंने देश और दुनिया की महत्वपूर्ण घटनाओं, समस्यओं पर अपने विचार रखें और कई बार तो उनमें बदलाव भी किया। उन्होंने कहा जब मेरे विचार में कोई अंतर्विरोध दिखे तो पुरानी बात को छोड़ नई बात को मान्य करना।

गांधी से ठीक विपरीत अंबेडकर हरिजन शब्द को अस्वीकार करते थे उनका कहना था क्या दलित और अछूत हरिजन हैं शेष काई नहीं और हरिजन कहने से उनकी स्थिति और अवस्था सुधर जायेगी। वे वर्णाश्रम व्यवस्था को समाप्त करने को सर्वोच्च प्राथमिकता देते थे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्हें अंग्रेज से सहयोग लेने में भी कोई हिचक नहीं थी। वह स्वराज्य प्राप्त करने के लिए कांग्रेस के उतावलेपन और भारत को स्वतंत्र करने की अंग्रेजों की अनिच्छा का लाभ उठाकर अपने लोगों का भविष्य संवारने के लिए स्वतंत्र भारत में उनके सामाजिक और राजनीतिक अधिकर सुरक्षित करना चाहते थे। वे विद्वान भी थे और कर्मठ राजनीतिज्ञ भी। उनके विचारों पर आधुनिक सामाजिक चिंतन एवं पश्चिमी राजनीतिक आर्थिक अवधारणाओं का गहरा प्रभाव थ। उन्होंने हिंदू सामाजिक व्यवस्था में दोष बताने और उसमें निहित अमानवता को उजागर करने के उद्देश्य से आधुनिक समाज शास्त्रों के साथ–साथ प्राचीन हिंदू धर्म शात्रों को भी पढ़ा। गांधी के लेखन में जो स्थन सत्य और अहिंसा का है अंबेडकर के लेखन में वहीं स्थान स्वतंत्रता, समानता और बंधुता का है।

सत्य है कि अंबेडकर ने जाति प्रथा छुआछूत और उनसे जुड़ी सामाजिक विषमता का प्रत्यक्ष अनुभव अपने बाल्य–काल से किया था। इसके विपरीत गांधी को इन चीजों का अनुभव दक्षिण अफ्रीका में हुआ। दक्षिण अफ्रीका में मैरित्सवर्ग स्टेशन की घटना का उन पर काफी प्रभाव पड़ा इस घटना के बाद उनमें एक क्रंतिकारी परिवर्तन आया और इसने उन्हें महात्मा बना दिया। राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के नेतृत्वकर्ता होने के कारण रणनीति के तहत उन्होंने जो भी किया हो किंतु वे सदा अस्पृश्यता के विरोधी रहे धीरे–धीरे जाति प्रथा के भी विरोधी हो गए थे।

गांधी और अंबेडकर की पहली मुलाकात 14 अगस्त 1931 में मुंबई में हुई थी। इस मुलाकात में गांधी ने अस्पृश्यता निवारण के लिए अपने और कांग्रेस के प्रयास का जिक्र किया। प्रत्युत्तर में अंबेडकर ने कहा "कांग्रेस ने समस्या को औपचारिक मान्यता देने के अलावा कुछ नहीं किया है कांग्रेस अपनी कथनी के बारे में ईमानदार नहीं हैं आप कहते हैं कि ब्रिटिश सरकार का ह्रदय परिवर्तन होता नहीं दिख रहा है। जब तक वह अपनी बात पर अड़े हैं तब तक हम न कांग्रेस पर विश्वास करेंगे और न हीं हिंदुओं पर। हम अपनी मदद आप करने और आत्मसम्मान में विश्वास करते हैं। हम महान नेताओं और महात्माओं में विश्वास करने के लिए तैयार नहीं है।"

मतभेदों की इन पाट खाई के रहते हुए दूसरे गोलमेज सम्मेलन में गांधी और अंबेडकर के बीच सहमति की कोई गुंजाइश नहीं थी। वहां अंबेडकर ने अछूतों के लिए पृथक निर्वाचन मंडल की मांग की और गांधी ने इसका घोर विरोध किया। अंबेडकर स्पष्ट कर चुके थे कि दलित वर्ग सत्तान्तरण के लिए आतुर नहीं है किंतु उसका विरोध करने की स्थिति में भी नहीं है। अगर सरकार दवाब में सत्तन्तरण करना चाहती हैं तो सत्ता हिंदू या मुसलमान किसी एक समुदाय के हाथों में नहीं दी जाए बल्कि इस तरह के प्रावधान किए

जाएं कि उसमें सभी समुदायों की साझेदारी रहे। विभिन्न पक्षों के विचारों और मांग में बहुत से मतभेद के रहते हुए उस सम्मेलन में सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व पर कोई आम राय नहीं बन पाई और यह सम्मेलन अनिर्णीत समाप्त हो गया।

1932 में ब्रिटिश सरकार ने सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व के सवाल पर अपना निर्णय दिया इसमें अछूतों के लिए अलग निर्वाचक मंडल की अंबेडकर की मांग स्वीकार कर ली गई इस समय गांधी येरवडा जेल में थे पहले की तरह वह भी अछुतों के लिए अलग निर्वाचन मंडल को हिंदुओं और भारतीय राष्ट्र के हितों के विरूद्ध मानते थे। इसके विरोध में गांधी ने अपने अहिंसक अस्त्र आमरण उपवास का प्रयोग किया। निश्चय हीं ये अंबेडकर के लिए कठिन निर्णय की घड़ी थी एक ओर अछूतों के लिए प्राप्त किए गए अधिकारों की रक्षा का दायित्व था तो दूसरी ओर गांधी की जीवन रक्षा का प्रश्न। गांधी का उपवास शुरू होने के पहले ही दलितों की एकता में दरारें पड़ने लगी थी। इस बीच देश के राष्ट्रवादी समाचार पत्र भी बड़ी कठोरता से अंबेडकर का विरोध कर रहे थे। सारी नजरें अंबेडकर पर केंद्रित थी। इन सब दवाबों के वातावरण में अंततः 'यरवडा या पूना समझौता' हुआ इसमें संयुक्त निर्वाचन मंडल में अछूतों के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई। इन सारे प्रश्नों को लेकर ऐतिहासिक परिपेक्ष्य में देखें तो अंबेडकर और गांधी दोनों ने उदारता और सूझबूझ का परिचय दिया। गांधी ने हिंदू के संवाददाता को बताया कि "हिंदुओं को उनके सदियों के पाप का दंड देने के लिए अंबेडकर अपनी बात पर अंडे रह सकते थे। अगर उन्होंने ऐसा किया होता तो मुझे उनसे कोई शिकायत न होती और मेरी मृत्यु हिंदुओं द्वारा अगणित पीढ़ियों पर किए गए अत्याचारों की मामूली कीमत होती। लेकिन उन्होंने उदारता दिखाया और क्षमा का अनुसरण किया। आशा करता हूँ कि सवर्ण हिंदू अपने को इस क्षमा के पात्र सिद्ध करेंगे और समझौते का अक्षरशः आत्मिक भाव से पालन करेंगे।

इसी बीच गांधीजी के संबंध में अंबेडकर के विचारों में परिवर्तन आया और उनको लगने लगा कि जाति प्रथा, वर्ण व्यवस्था और छुआछूत निवारण के संबंध में गाधी जी के विचार बदले हैं। दिसंबर 1932 में अप्पासाहेब पटवर्धन रत्नागिरी जेल में थे। वे छुआछूत मिटाने के रचनात्मक कार्यक्रम के अनुसार खुद पाखाना साफ करना चाहते थे किंतु जेल अधिकारियों ने इसकी अनुमति नहीं दी। इसके विरोध में उन्होंने जेल में उपवास शुरू कर दिया। जब गांधी जी को इसकी खबर मिली तो उन्होंने भी पटवर्धन के समर्थन में उपवास आरंभ कर दिया। भारत सरकार ने तुरंत इस पर ध्यान दिया और अप्पा साहब की बात मान ली गई। गांधी जी को एक या डेढ़ दिन से अधिक उपवास नहीं करना पड़ा। यह समाचार गोलमेज सम्मेलन के लिए गए अंबेडकर जी को मिली इस पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि मेरी राय में इस बारे में गांधी जी का कार्य सही है और सरकार की नीति गलत। सरकार को भी पटवर्धन की इच्छा के अनुसार भंगी का काम करने देना चाहिए। धंधे को परंपरा से जोड़कर नहीं देखा जाना चाहिए ऐसी परंपरा और रूढि को जितनी जल्दी हो सके खत्म होना चाहिए।

गांधी और अंबेडकर में एक दूसरे की पुनर्मूल्यांकन और परस्पर सहयोग का यह दौर अधिक नहीं चल सका। गांधी और अंबेडकर के मिलकर काम न कर सकने के तीन मुख्य कारण माने जाते हैं। एक, जाति प्रथा और और अस्पृश्यता की बुराई के विश्लेषण में दोनों के बीच मूल दृष्टि भेद। गांधीजी अनेक वर्षों तक ऊंच–नीच के क्रम तथा और अस्पृश्यता के बीच संबंध नहीं देख सके। दूसरा येरवडा या पूना समझौता में किए वादों को लागू नहीं किया गया। अंबेदकर ने पृथक निर्वाचक मंडल के बदले सीटों के आरक्षण और प्राथमिक चुनाव व्यवस्था मान ली थी लेकिन असल बात तो यह थी कि दलित वर्ग जिन कमजोरियों का शिकार था उनको शीघ्र दूर करने का प्रयत्न किया जाए। गांधी और अंबेडकर में अलगाव का तीसरा कारण दलित मुक्ति के उपाय और नेतृत्व के संबंध में दोनों में मौलिक मतभेद था गांधी दलित मुक्ति को एक सामाजिक नैतिक सुधार के आंदोलन के रूप में लेते थे किंतु अंबेदकर इतने से संतुष्ट नहीं हो सकते थे वह प्रतीकात्मक के बजाय और अस्पृश्यता–उन्मूलन के लिए संस्थागत और स्थायी आधार तैयार करना चाहते थे। इसलिए उनका जोर शिक्षा नौकरियों और राजनीतिक अधिकारों पर था।

इसी तरह से दलितों के नेतृत्व के बारे में दोनों में गहरा दृष्टिभेद था। आंबेडकर "चाहते थे कि अनुसूचित जातियों में निर्भीक नेतृत्व उभरे और उनमें से जानकार, ईमानदार और स्वाभिमानी नेता आएँ न कि खुशामदी और भ्रष्ट नेता, जो गांधी के विचार से कांग्रेस आंदोलन में पैदा हो रहे थे। वे नहीं चाहते थे कि हरिजन नेता नेहरू, पटेल या अन्य नेताओं के आगे सिर झुकाएँ।" वर्षों बाद दलित नेतृत्व की प्रकृति के बारे में डॉ. राममनोहर लोहिया ने भी विचार किया तो उन्होंने पाया कि दलितों के नेता, विशेषकर सत्ता में बैठे दलित नेता या तो दब्बू हैं अथवा दोमुँहे हैं। दब्बू नेता सवर्ण कांग्रेसी नेताओं की चापलूसी करके जैसे–तैसे कुरसी पा लेने की कोशिश में रहते हैं या अपनी कुरसी बचाए रखना चाहते हैं। कुछ दलित नेता अपनी बिरादरी या अनुयायियों में तो भड़काने और जलन पैदा करनेवाले भाषण देते हैं, परंतु ऊँची जातियों के लोगों में घिघियाने लगते हैं।

जो भी हो, गांधी और अंबेडकर के विचारों तथा व्यक्तित्वों की तुलना करते समय यह बुनियादी बात भुला दी जाती है कि इन दोनों के जीवन–संदर्भ और कार्यक्षेत्र अलग थे। डॉ. अंबेडकर ने उन लोगों में आत्माभिमान जगाया, जिन्हें हिंदू समाज–व्यवस्था ने सदियों से आत्महीन बना दिया था। उन्होंने एक ओर 1926 में महाड के चवदार तालाब पर सत्याग्रह करके दलितों को अमानुषिक छुआछूत के विरूद्ध युवा दलितों में रिरियाने के बजाय संघर्ष का तेजस्वी स्वर सुनाई देता है तो यह डॉ. आंबेडकर की ही देन है।

जब अंबेडकर दलितों को जगाने का प्रयत्न कर रहे थे तभी गांधी अस्पृश्यता के विरूद्ध सवर्णों की पथराई हुई अंतरात्मा को झकझोरने, उनको अपनी गलती महसूस कराने, उनमें अपने पूर्वजों की और खुद अपनी अमानुषिकता के लिए पापबोध जाग्रत करने का कार्य कर रहे थे। संत साहित्य को अपना हथियार बनाकर वे छुआछूत के समर्थकों से लड़े। सवर्णों में पश्चात्ताप भाव और न्याय–बुद्धि जगाने का गांधी का यह प्रयत्न देश में दलितों की स्थिति को देखते हुए भी नहीं हैं। वे देश भर में बिखरे हुए थे। आर्थिक दृष्टि से भी वे नितांत दीन–हीन थे। सदियों से अन्याय के विरूद्ध लड़ने की कोई आदत उनमें नहीं थी। इतनी प्रतिकूल परिस्थितियों में दलितों का कोई आंदोलन तभी सफल हो सकता था जब सवर्णों का खुले दिलोदिमागवाला और आगे देखनेवाला हिस्सा उसमें सक्रिय सहयोग दे। गांधी ने इसके लिए जमीन तैयार की थी।

निष्कर्ष :–

गांधी और आंबेडकर दोनों ही विभूति पूजा के सख्त आलोचक थे। वे अवतारवाद की पुरानी परंपरा से जूझे और उन्होंने बार–बार किसी एक महापुरूष या देवता के भरोसे बैठे रहने तथा उसकी बातों को चिरंतन सत्य मान लेने की हम भारतवासियों की आदत का विरोध किया। किंतु आज गांधी–और उनसे भी ज्यादा डॉ. आंबेडकर के अनुयायी उनके एक–एक शब्द, एक–एक कार्य को कमोबेश ईश्वर का कथन बनाने में जुटे हैं। इसीका परिणाम है कि अन्यायपूर्ण जाति–व्यवस्था के विरूद्ध एकजुट संघर्ष करने के बजाय सामाजिक क्रांति की शक्तियाँ न सिर्फ बँटी हुई हैं वरन् एक–दूसरे की काट करने में अपनी शक्ति नष्ट कर रही हैं। यदि हमें सामाजिक समता के लिए सार्थक संघर्ष लड़ना है तो दूर–दूर खड़े गांधी और आंबेडकर को एक–दूसरे के निकट लाने का प्रयास करना ही होगा।

संदर्भ सूची

1. 'वॉट कॉंग्रेस एंड गांधी हैव डन टू द अनटचेबल्स– डॉ. भीमराव अंबेडकर
2. हू वर द शुद्राज : डॉ. भीमराव अंबेडकर
3. हिन्द स्वराज – महात्मा गांधी
4. गांधी कथा– महादेव भाई देसाई